ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 383-386

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

ग्रामीण समुदाय में सजातीयता का ह्रास

दिलीप कुमार यादव
शोध अध्येता–समाजशास्त्र विभाग, टी0डी0पी0जी0 कालेज, जौनपुर (उ0प्र0) भारत।

Received- 04.08.2020, Revised- 08.08.2020, Accepted - 12.08.2020 E-mail: - rajadharmendra487@gmail.com

सारांश : *"ग्रामीण समुदाय में कृषि व्यावसाय की प्रकृति स्वयं इस प्रकार की है कि यहाँ शिक्षा को न तो अनिवार्य समझा जाता है और न ही सभी के पास शिक्षा प्राप्ति के समुचित साधन होते है। यहाँ ग्रामीणों के व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों पर भाग्यवादिता का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। ग्रामीण समुदाय में सभी वर्गो को कर्म की धारणा ने किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित किया है यहाँ कर्म–फल की धारण स्वर्ग और नरक तथा ईश्वरी न्याय की धारणाएँ इतनी प्रबल होती है कि वैसी धारणा अन्य समुदायों में देखने को नही मिलती। प्रस्तुत शोध–लेख का उद्देश्य ग्रामीण समुदाय में परिवारात्मकता में ह्रास, स्थानीयता की भावना में ह्रास, सामुदायिक भावना में ह्रास, सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता में ह्रास तथा व्यावसायिक सजातीयता में ह्रास आदि का अध्ययन किया गया है ताकि ग्रामीण समुदाय में हो रहे परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त की जा सके।"*

कुंजीभूत शब्द– ग्रामीण समुदाय, कृषि व्यवसाय, प्रकृति, अनिवार्य, समुचित साधन, मनोवृत्तियों, भाग्यवादिता।

ग्रामीण समुदाय प्राकृतिक पर्यावरण में स्थित व्यक्तियों का सम्पूर्ण मानवीय जीवन को समेटे एक लघु समूह है। यह प्रत्यक्षतः प्रकृति पर निर्भर होता है। आजीविका उपार्जन हेतु प्रकृति पर निर्भरता पायी जाती है, प्राथमिक सम्बन्धों की प्रधानता होती है एवं इसके सदस्य एक दृढ़ सामुदायिकता की भावना से परस्पर बँधे होते है। मेरिल तथा एलरिज के अनुसार, "ग्रामीण समुदाय के अन्तर्गत संस्थाओं एवं ऐसे व्यक्तियों का समावेश होता है, जो एक छोटे से केन्द्र के चारों ओर संगइित होते हैं तथा सामान्य और प्राथमिक हितों द्वारा परस्पर सम्बद्ध रहते हैं।"[1]

ग्रामीण सामुदायिक सजातीयता की दृष्टि से वर्तमान प्रवृत्तियों व परिस्थितियों के मद्देनजर ग्रामीण समुदाय के अन्तर्गत सीमित भू–भाग अथवा समूह के सीमित आकार की धारणा प्रभावित होने लगी है। 21वीं सदी में परिवहन एवं संचार के साधनों में अत्यधिक वृद्धि होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों के अन्तर्सम्बन्धों एवं अन्तःक्रियाओं का दायरा बढ़ रहा है। फलतः यदि वृहत् समुदायों में भी ग्रामीण विशेषताएं विद्यमान हों तो उन्हे भी ग्रामीण समुदाय के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

वृहद् समुदायों की तुलना में ग्रामीण समुदाय का आकार प्रायः लघु आकार का होता है। वर्तमान में भारत के करीब 6.05 लाख गाँवों में से 4 लाख 51 हजार से भी अधिक गाँव ऐसे है जिनकी जनसंख्या एक हजार से भी कम है। यह समुदाय भूमि एवं कृषि से प्रत्यक्षतः सम्बद्ध होते है। अतः जब भी एक गाँव की जनसंख्या में अधिक वृद्धि होती है, वे सामान्यतया दो छोटे–छोटे गाँवों के रूप में विभाजित हो जाते है। इसी आधार पर रॉबर्ट रेडिफील्ड ने ग्रामीण समुदाय को 'लघु समुदाय' कहा है।[2] चिताम्बर ने भी समुदायों के आकार के आधार पर नगरीय एवं ग्रामीण समुदायों के अन्तरों की विवेचना किया है।[3] स्मिथ ने भी अपने अध्ययन के निष्कर्ष में कहा है कि, "ग्रामीण समुदाय की सबसे मुख्य विशेषता उसका छोटा आकार का होना है, क्योंकि इसी सन्दर्भ में ग्रामीण समुदाय एक–दूसरे के

ग्रामीण समुदाय प्रत्यक्षतः कृषि–व्यवसाय पर निर्भर होता है। भारत की जनसंख्या का 70 प्रतिशत भाग आज भी कृषि पर निर्भर है। तात्पर्य यह है कि ग्रामीण समुदाय का मुख्य एवं प्राथमिक व्यावसाय कृषि होता है, दूसरे व्यावसाय सहायक होते है। वैश्वीकरण ने नगरीयता को जन्म दिया है तथा अन्य देशों की तुलना में भारतीय ग्रामीण समुदाय की विशेषता इससे अल्प मात्रा में प्रभावित होते हुए औद्योगीकरण के फलस्वरूप ग्रामीण जनसंख्या की कृषि पर निर्भरता बनी हुई है। वर्तमान में भी ग्रामों में अनेक जातियाँ, जो कुटीर उद्योग अथवा दस्तकारी के द्वारा आजीविका उपार्जित करती हैं, औद्योगीकरण ने इन्हें जबरदस्त चुनौति दी है।

ग्रामीण समुदाय की सर्वप्रमुख विशेषताओं में 'परिवारात्मकता' है।[4] यह ग्रामीण समुदाय में सबसे महत्वपूर्ण इकाई होती है। यहाँ परिवार समुदाय की एक पृथक इकाई मात्र नहीं है, बल्कि सामुदायिक जीवन के अन्य सभी क्षेत्रों में भी अपना हस्तक्षेप रखती है और इस रूप में यह एक सुदृढ़ व्यवस्था का अंग होती है। इसीलिए गाँवों में व्यक्ति की प्रतिष्ठा उसके परिवार के सन्दर्भ में निर्धारित होती है। सच्चिदानन्द के विचार में, "भारत के कृषक समाज में

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

व्यक्ति की पहचान उसके विस्तृत परिवार के सन्दर्भ में ही होती है।"[5]

ग्रामीण समुदाय ग्रामीणों के जीवन में सामाजिक समरूपता के दर्शन को जीवंतता प्रदान करता है। तात्पर्य यह है कि, एक गाँव भले ही अनेक धर्मो एवं जातियों का पुंज होता है, लेकिन उनकी प्रथाओं, उत्सवों, मनोवृत्तियों एवं कार्य के ढंगों में समता देखने को मिलती है। समरूपता की यह स्थिति ग्रामीणों में दृढ़ सामुदायिकता की भावना को जन्म देती है। इसी आधार पर ग्रामीण समुदाय को 'जीवन की एक सामान्य विधि' कहा जाता है।

ग्रामीण समुदाय में स्थानीय एवं सामाजिक गतिशीलता का सीमित स्वरूप दिखता है। अपने गाँव से दूर जाकर अधिक लाभ होने की आशा के बाद भी ग्रामीण अपने गाँव से जुड़े रहते है। सामाजिक क्षेत्र में वे परिवर्तनों के प्रति शंकालु ही नहीं होते बल्कि परिवर्तनों को समुदाय विरोधी मानते हैं। परम्परा को व्यवहारों का आधार मानना ग्रामीण मनोवृत्ति का महत्वपूर्ण अंग है। गाँवों में विभिन्न समूहों की स्थिति में इसीलिए कुछ परिवर्तन नहीं होता कि, सामाजिक गतिशीलता को ग्रामों में कोई महत्व नहीं दिया जाता।

ग्रामीण समुदाय में जातीय संस्तरण सामाजिक सम्पर्क का मुख्य आधार है। गाँवों में आज भी जाति के आधार पर विवाह, खान–पान, व्यवसाय निर्धारित तथा जातीय नियमों की अवहेलना पर दण्ड का प्रावधान होता है। एक औपचारिक संगठन के रूप में आज जाति पंचायतों की संरचना टूट रही है, लेकिन अनौपचारिक रूप से जाति पंचायतें आज भी प्रभावी हैं तथा इसके नियमों के उल्लंघन पर सदस्यों का सामाजिक बहिष्कार, जाति भोज अथवा प्रायश्चित आदि जैसे दण्ड दिया जाता है।

ग्रामीण समुदाय में कृषि व्यवसाय की प्रकृति स्वयं इस प्रकार की है कि यहाँ शिक्षा को न तो अनिवार्य समझा जाता है और न ही सभी के पास शिक्षा प्राप्ति के समुचित साधन होते हैं। परिणामस्वरूप ग्रामीण व्यवहारों एवं मनोवृत्तियों पर भाग्यवादिता का स्पष्ट प्रभाव देखने को मिलता है। ग्रामीण समुदाय में सभी वर्गों को कर्म की धारणा ने किसी न किसी रूप में अवश्य प्रभावित किया है। यहाँ कर्म–फल की धारणा, स्वर्ग और नरक तथा ईश्वरीय न्याय की धारणाएँ जितनी अधिक प्रबल है, वैसी अन्य समुदाय में देखने को नहीं मिलती है।

संक्षेप में, भारतीय ग्रामीण समुदाय में ऐसी विशेषताएँ विद्यमान है, जो इनकी सजातीयता को बनाये रखने के लिए प्रभावी भूमिका अदा करती है। प्रस्तुत शोध–पत्र में आधुनिक प्रवृत्तियों के कारण आ रहे ह्रास का अध्ययन–विश्लेषण प्राथमिक तथ्यों के आधार पर किया गया है।

परिवारात्मकता :– ग्रामीण समुदाय के सबसे महत्वपूर्ण प्राथमिक संस्थाओं में परिवार का स्थान है। यहाँ तक कि गाँव या समुदाय में व्यक्ति की स्थिति का आँकलन उसके परिवार के आधार पर किया जाता है साथ ही वैवाहित सम्बन्धों की स्थापना तथा सामाजिक नियंत्रण में ग्रामीण परिवारों की सबसे सशक्त भूमिका होती है। ऐसी महत्वपूर्ण सामुदायिक संस्था में ह्रास का अध्ययन कर वस्तु स्थिति जानने का प्रयास शोधार्थी द्वारा किया गया है।

सारिणी संख्या – 1

ग्रामीण समुदाय में परिवारात्मकता में ह्रास

क्रमांक	परिवारात्मकता में ह्रास	संख्या	प्रतिशत
01	अत्यधिक	54	18.00
02	आंशिकतः	108	36.00
03	नहीं	138	46.00
	योग	**300**	**100.00**

सारिणी संख्या – 1 में ग्रामीण समुदाय में परिवारात्मकता में ह्रास सम्बन्धी प्रदत्तों को रखा गया है, जिसके अवलोकन से विदित है कि 18.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं के विचार में परिवारात्मकता में अत्यधिक ह्रास, 36.00 प्रतिशत के विचार में आंशिकतः ह्रास और 46.00 प्रतिशत के विचार में ह्रास नहीं है। तथ्यों से स्पष्ट है कि, अधिकांश तथ्य ग्रामीण समुदाय के परिवारात्मकता में ह्रास (अत्यधिक तथा आंशिकतः मिलाकर) सम्बन्धी प्राप्त हुए हैं, जो समाशास्त्रीय अध्ययनों में चिन्तन का विषय है, क्योंकि ऐसी स्थिति में सामुदायिकता के अस्तित्व पर आंच आने की सम्भावना में वृद्धि होगी।

स्थानीयतावद की भावना :– स्थानीयतावाद ग्रामीण समुदाय की रीढ़ कही जा सकती है। सामान्यतया जिस अवधारणा में वाद लग जाता है, उसे नकारात्मकता की नजर से देखा जाता है, किन्तु ग्रामीण समुदाय में यह अपनत्व तथा लगाव का द्योतक होता है। अतः समाजशास्त्र में इसके अध्ययन का विशेष महत्व है।

सारिणी संख्या – 2

ग्रामीण समुदाय में स्थनीयता की भावना में ह्रास

क्रमांक	स्थानीयता में ह्रास	संख्या	प्रतिशत
01	अत्यधिक	63	21.00
02	आंशिकत	149	49.67
03	नहीं	88	29.33
	योग	**300**	**100.00**

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

तालिका संख्या– 2 में अंकित आँकड़ो से विदित है कि, 21.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं के विचार में ग्रामीण समुदाय में स्थानीयतावाद में अत्यधिक ह्रास, 49.47 प्रतिशत के विचार में आंशिकतः ह्रास और 29.33 प्रतिशत के विचार में ह्रास नहीं है। स्पष्ट है कि, अधिकांश तथ्य ग्रामीण समुदाय के स्थानीतयतावाद में ह्रास (अत्यधिक तथा आंशिकतः मिलाकर) सम्बन्धी प्राप्त हुए हैं, जो सामुदायिकता की भावना की दृष्टि से नकारात्मक कहा जायेगा।

सामुदायिक भावना :– आज के संचार युग में एवं भौतिकता की अंधी दौड़ में समुदाय की इस भावना में ह्रास पाया जा रहा है, ऐसा विज्ञों का मानना है। प्रस्तुत शोध में इस बारे में वस्तुस्थिति क्या है को जानने के लिए शोधार्थी द्वारा तथ्यों का संकलन किया गया है।

सारिणी संख्या – 3

ग्रामीण समुदाय में सामुदायिक भावना में ह्रास

क्रमांक	सामुदायिक भावना में ह्रास	संख्या	प्रतिशत
01	अत्यधिक	59	19.67
02	आंशिकतः	163	54.33
03	नहीं	78	26.00
योग		300	100.00

तालिका संख्या– 3 में अंकित आँकड़ो से विदित है कि, 19.67 प्रतिशत उत्तरदाताओं के विचार में ग्रामीण समुदाय में सामुदायिक भावना में अत्यधिक ह्रास, 54.33 प्रतिशत के विचार में आंशिकतः ह्रास और 26.00 प्रतिशत के विचार में ह्रास नहीं है। स्पष्ट है कि, अधिकांश तथ्य ग्रामीण समुदाय के सामुदायिक भावना में ह्रास (अत्यधिक तथा आंशिकतः मिलाकर) सम्बन्धी प्राप्त हुए है, जो ग्रामीण समुदाय के बिखरने का कारण बन सकता है, क्योंकि सामुदायिक भावना के अभाव में या कमी के कारण समुदाय की अन्य विशेषताएँ प्रभावित होंगी और ऐसा होने पर इसकी संरचना पर प्रतिकूल प्रभाव का पड़ना स्वाभाविक है।

सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता :– ग्रामीण समुदाय में सामाजिक सजातीयता की भाँति सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता भी पाया जाता है। तात्पर्य यह है कि, लोगों की प्रस्थिति भले ही अलग–अलग भागों में विभक्त हो, किन्तु रहन–सहन के स्तर पर एक होता है और यही ग्रामीणों को एकता के सूत्र में पिरोकर सबको सबके सुख–दुःख में एक साथ खड़े होने की प्रेरणा प्रदान करता है। किन्तु, जैसे–जैसे समाज में नगरीयता का प्रभाव बढ़ता जा रहा है, ग्रामीणों में भी अपने को प्रदर्शित करने की भावना प्रबल होती जा रही है और एक ग्रामीण दूसरे को अपनी हैसियत से रूबरू करना चाह रहा है। इसी धारणा के चलते समाजशास्त्रियों द्वारा ग्रामीण समुदाय के सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता सम्बन्धी अध्ययन किये जा रहे है।

सारिणी संख्या – 4

ग्रामीण समुदाय में सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता में ह्रास

क्रमांक	सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता में ह्रास	संख्या	प्रतिशत
01	अत्यधिक	93	31.00
02	आंशिकतः	164	54.67
03	नहीं	43	14.33
योग		300	100.00

तालिका संख्या– 4 में अंकित आँकड़ो से विदित है कि, 31.00 प्रतिशत उत्तरदाताओं के विचार में ग्रामीण समुदाय में सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता में अत्यधिक ह्रास, 54.67 प्रतिशत के विचार में आंशिकतः ह्रास और 14. 33 प्रतिशत के विचार में ह्रास नहीं है। स्पष्ट है कि, अधिकांश तथ्य ग्रामीण समुदाय में 'सामाजिक–सांस्कृतिक सजातीयता' में ह्रास (अत्यधिक तथा आंशिकतः मिलाकर) सम्बन्धी प्राप्त हुए है, जो ग्रामीण समुदाय में रहन–सहन सम्बन्धी विभेद उत्पन्न कर सकता है और इस प्रकार ग्रामीण समुदाय की एकता प्रभावित होगी।

व्यावसायिक सजातीयता :– भारतीय ग्रामीण समुदाय आत्मनिर्भर होते हैं, क्योंकि परम्परागत गाँव (समुदाय) उत्पादक इकाई के रूप में प्रतिष्ठित था और इस उत्पादन प्रक्रिया को व्यवसायिक कार्य–विभाजन के माध्यम से किया जाता है। इस विभाजन का आधार 'जजमानी प्रथा' थी। प्रोफेसर योगेन्द्र सिंह का विचार है कि, "जजमानी एक ऐसी व्यवस्था है जो गांवों के अन्तर्जातीय सम्बन्धों में पारस्परिकता पर आधारित सम्बन्ध द्वारा नियंत्रित होती है।"[6] ईश्वरन का मत है कि, "यह एक ऐसी व्यवस्था है, जिसमें सम्पूर्ण सामुदायिक जीवन में प्रत्येक जाति को एक भूमिका निभानी होती है। इस भूमिका में आर्थिक, सामाजिक, एवं नैतिक कार्य होते है।"[7] कोलेण्डा का मानना है कि, "हिन्दू जजमानी व्यवस्था को भारतीय गांवों में एक संस्था या सामाजिक–व्यवस्था के रूप में अवधारित किया जाता है, जिसकी संरचना भूमिकाओं तथा प्रतिमानों द्वारा बनी होती है। यह जाल भूमिकाओं तथा सम्पूर्ण व्यवस्था से गुंथा होता है, जिसे सामान्य सांस्कृतिक मूल्यों द्वारा वैधता एवं समर्थन प्राप्त होता है।"[8] स्पष्ट है कि, व्यावसायिक सजातीयता को बनाये रखने में जजमानी व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका होती है, जिसमें आज ह्रास देखने को मिल रहा है। इसी

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

सत्यता को जानने के लिए प्रस्तुत शोध में प्रयास किया गया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Merril and Eiridge : "Culture of Society", p. 336.
2. Robert Redfield: "The Little Community", p.4.
3. Chitambar : "Introductory Rural Sociology", p.131.
4. Smith, T. Lynn: "The Sociology of Rural Life", p.20.
5. Sachchidanand: "Social Orgnization of Peas ants society in India". The Eastern Anthro pologist. Vol. 31, (july-September.1978) p. 232.
6. Singh, Yogendra: "Modernization of Indian Tradition", Rawat Publocations, Jaipur, 1983.
7. Ishwaran, R.: "Tradition and Economy in Vil lage India", Routledge and kegan paul Ltd., London, 1966 p. 41.
8. Kolenda, Pauline: "Toward a Model of the Hindu Jajmani System", Human Organiza tion, Vol.22, No.1, Spring, 1963 pp.11-31

*****